

दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

आरक्षित तिथि: 22.10.2013

उद्घोषित तिथि: 13.01.2014

मू.वि.या.57/2013

ज़ीरोक्स इंडिया लिमिटेड

.....याचिकाकर्ता

बनाम

मैसर्स. कंप्यूटर अनलिमिटेड और अन्य

.....प्रत्यर्थीगण

इस मामले में पेश हुए अधिवक्तागण:

याचिकाकर्ता के लिए: श्री रजत जोनेजा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थीगण के लिए: सुश्री मंजुला गुप्ता, प्र-1 की अधिवक्ता

कोरम:

माननीय श्री न्यायमूर्ति राजीव शकधर

न्या. राजीव शकधर

1. यह मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 (संक्षेप में अधिनियम) की धारा 34 के तहत दायर एक याचिका है, जो इस न्यायालय द्वारा नियुक्त एकमात्र मध्यस्थ द्वारा पारित दिनांक 26.11.2012 अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए दायर की गई है।

1.1. प्रत्यर्थी सं.1 जो कि वर्तमान कार्यवाही में मूल दावेदार है के द्वारा अधिनियम की धारा 11(8) के साथ पठित धारा 11(6) के अंतर्गत दायर याचिका में दिनांक 07.02.2007 के आदेश द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति गई थी। विशेष रूप से, इस आदेश द्वारा न केवल मध्यस्थ की नियुक्ति की गई, बल्कि प्रति सुनवाई 11,000/- रुपये की दर से, अधिकतम 1,10,000/- रुपये की दर से उसकी फीस भी तय की गई।

1.2. ऐसा प्रतीत होता है कि इसके बाद इस न्यायालय के समक्ष एक आवेदन प्रस्तुत किया गया जिसमें दोनों पक्षों की सहमति थी, तथा पक्षों को मध्यस्थ के परामर्श से शुल्क निर्धारित करने की अनुमति प्रदान की गई। यह आदेश दिनांक 16.07.2008 को पारित किया गया था। मैंने अपने निर्णय के आरंभिक भाग में ही इस पहलू पर ध्यान दिया है, क्योंकि याचिकाकर्ता द्वारा प्रदर्शित की गई अधिकांश चिंता, दिए गए लागत के संबंध में है। इसलिए, मैं अपने निर्णय के उत्तरार्द्ध भाग में चुनौती की वैधता की कुछ विस्तार से जांच करने का प्रस्ताव करता हूँ।

2. मामले के तथ्यों पर वापस आते हुए: पक्षों के बीच विवाद दिनांक 20.08.1999 को पक्षों के बीच हुए बिक्री संवर्धन एजेंसी करार (संक्षेप में करार) से उत्पन्न हुआ है। उक्त समझौते के तहत, प्रत्यर्थी सं. 1, मेसर्स कंप्यूटर अनलिमिटेड नामक एकल स्वामित्व वाली कंपनी को याचिकाकर्ता के उत्पादों को बेचने के लिए एकमात्र प्रमोशन एजेंटों में से एक के रूप में

नियुक्त किया गया था, जिसमें उक्त समझौते के अनुलग्नक-ए में वर्णित विभिन्न उपकरण और प्रणालियां शामिल थीं। अपने प्रयासों के लिए, प्रत्यर्थी सं. 1 को उसके द्वारा प्राप्त और याचिकाकर्ता द्वारा स्वीकार किए गए आदेशों के संबंध में सेवा शुल्क का भुगतान किया जाना था।

2.1. उल्लेखनीय है कि याचिकाकर्ता और प्रत्यर्थी सं. 1 के बीच 1993 से बिक्री संवर्धन एजेंट (संक्षेप में एसपीए) का संबंध है। दिनांक 20.08.1999 को उक्त समझौते के निष्पादन से पहले, तीन वर्षों के अंतराल के बाद समझौते को दो बार नवीनीकृत किया गया था; जो समझौते की अवधि थी। विचाराधीन अनुबंध को नवीकरण के लिए तीन वर्ष की अवधि के लिए चलना भी आवश्यक था। दुर्भाग्य से, प्रत्यर्थी सं. 1 के लिए, अनुबंध को याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 01.01.2002 को एकतरफा रूप से समाप्त कर दिया गया था।

2.2. इससे प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा दावे उत्पन्न हुए, जिनका निपटारा न होने के कारण प्रत्यर्थी सं. 1 को मध्यस्थता कार्यवाही का सहारा लेना पड़ा।

2.3. मध्यस्थ के समक्ष, पक्षों ने अपने-अपने अभिवचन दायर किये। वास्तव में, याचिकाकर्ता ने एक प्रतिउत्तर भी दायर किया है। प्रत्यर्थी सं. 1 ने 26 दावे उठाए। याचिकाकर्ता द्वारा कोई प्रतिदावा नहीं उठाया गया।

2.4. याचिकाकर्ता और प्रत्यर्थी सं. 1 दोनों ने एक-एक गवाह से पूछताछ की। प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से उसके मालिक श्री शांतनु बिस्वास (मा.सा.-1) ने

अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया, जबकि याचिकाकर्ता की ओर से श्री पी.आर. रंगनाथ (प्र.सा.-1) ने अपना साक्ष्य प्रस्तुत किया। दोनों गवाहों द्वारा अपने-अपने शपथपत्र प्रस्तुत करके मुख्य परीक्षण किया गया। दोनों गवाहों से विपक्षी पक्ष द्वारा प्रतिपरीक्षा की गई।

2.5. यह ध्यान देने योग्य है कि विद्वान मध्यस्थ द्वारा दिए गए लागत के संबंध में, याचिकाकर्ता ने काफी उत्सुकता से इस तथ्य पर जोर दिया कि प्रत्यर्थी सं.1 के गवाह श्री शांतनु बिस्वास (मा.सा.-1) से दिनांक 13.12.2008 से दिनांक 24.07.2010 तक की अवधि में 23 बैठकों में प्रतिपरीक्षा की गई थी, जबकि याचिकाकर्ता के गवाह श्री पी.आर. रंगनाथ (प्र.सा. -2) से दिनांक 11.09.2010 और दिनांक 15.12.2010 के बीच लगभग 9 बैठकों में प्रतिपरीक्षा की गई थी। इस प्रस्तुति के प्रभाव पर मेरे द्वारा विचार किया जाएगा, जबकि मैं विद्वान मध्यस्थ द्वारा लागत के निर्धारण से संबंधित मुद्दे पर विचार करूंगा।

3. विद्वान मध्यस्थ ने पक्षों के बीच पाँच मुद्दे सुलझाए। जो इस प्रकार हैं:

“.....(i) क्या दावेदार का प्रत्यर्थी के साथ कोई संबंध था?

(ii) क्या दिनांक 20.08.1999 का विक्रय संवर्धन अनुबंध विधिवत् रूप से समाप्त कर दिया गया था और यदि नहीं, तो इसका क्या प्रभाव होगा?

(iii) क्या प्रत्यर्थी का आचरण न्यायसंगत है और क्या यह दावेदार को देय वैध धनराशि को रोकने का अनुचित प्रयास दर्शाता है?

(iv) दावेदार किन दावों का हकदार है?

(v) ब्याज, लागत और व्यय.... "।

4. जहां तक मुद्दा संख्या (i) से (iii) का संबंध है, विद्वान मध्यस्थ ने याचिकाकर्ता के खिलाफ तथ्यात्मक निष्कर्ष को वापस कर दिया।

4.1. जहां तक मुद्दा संख्या (iv) का सवाल है, विद्वान मध्यस्थ ने प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा दर्ज किए गए 25 दावों में से 15 को स्वीकार कर लिया, जिनमें से एक को छोड़कर सभी को पूरी तरह से स्वीकार कर लिया गया। ध्यान रहे कि दावा संख्या 1 को दो भागों में विभाजित किया गया था, अर्थात् 1(क) और 1(ख), जिनमें से केवल दावा 1(ख) को स्वीकार किया गया।

4.2. दावा सं. 26 मुद्दा संख्या (v) के अंतर्गत आता था, जिसे आंशिक रूप से स्वीकार किया गया। जिन दावों को पूरी तरह से स्वीकार किया गया, वे थे दावा सं. 1(ख), 9, 10, 11, 13, 16, 17(a), 18, 19, 20, 21, 23, 24 और 25। एक दावा यानी दावा सं. 7 को आंशिक रूप से स्वीकार किया गया। शेष दावे: दावा संख्या 1(क), 2, 3, 4, 5, 6, 8, 12, 14, 15 और 22 को अस्वीकार कर दिया गया। दावा सं. 17 के दो भाग यानी दावा सं. 17(ख) और 17(ग) पर विचार नहीं किया गया।

4.3. सं. 1 द्वारा दर्ज किए गए 25 दावों (लागत और व्यय के दावे को छोड़कर) का कुल मूल्य 21,79,938/- रुपये था, जिसमें से 9,77,288/- रुपये के दावों को या तो खारिज कर दिया गया या उन पर विचार नहीं किया गया। इस प्रकार स्वीकृत दावों का मूल्य 12,02,650/- रुपये था।

4.4. दावा सं. 26, जो कि ऊपर बताया गया है, मुद्दा संख्या (v) के अंतर्गत आता है, इसमें ब्याज, लागत और व्यय शामिल हैं।

5. यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि ब्याज, लागत और व्यय के रूप में दी गई राशि के संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा उठाई गई आपति के अलावा, अन्य दावों के संबंध में चुनौती दावा सं. 9, 10, 11, 13 और 17 तक ही सीमित थी। चूंकि दावा सं. 17 के अंतर्गत केवल दावा संख्या 17(क) को ही स्वीकार किया गया था, इसलिए चुनौती, जैसा कि स्पष्ट है, दावे के उक्त भाग तक ही सीमित रहेगी, क्योंकि अन्य दो उप-दावों अर्थात् दावा सं. 17(ख) और 17(ग) पर विचार नहीं किया गया। मूल्य के संदर्भ में, इन दावों की कुल राशि 7,01,528 रुपये है, जो विद्वान मध्यस्थ द्वारा स्वीकृत दावों के कुल मूल्य का लगभग 58% है।

6. उपर्युक्त प्रस्तावना के साथ, मैं मुद्दा संख्या (i) से (iii) के संबंध में विद्वान मध्यस्थ द्वारा निकाले गए निष्कर्षों को भी इंगित करना चाहता हूँ।

6.1. जहां तक मुद्दा सं. (i) का सवाल है, विद्वान मध्यस्थ ने स्पष्ट रूप से पाया कि इस मामले में पक्षों के बीच रिश्ता मौजूद था, जो दिनांक 20.08.1999 को निष्पादित उपर्युक्त समझौते पर आधारित था। विद्वान मध्यस्थ ने पाया कि उक्त समझौता दिनांक 01.04.1999 से प्रभावी हुआ।

6.2. मुद्दा सं. 2 के संबंध में, विद्वान मध्यस्थ ने पाया कि याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी सं. 1 के साथ दिनांक 01.01.2002 के संचार के माध्यम से समझौता समाप्त कर दिया था। उन्होंने यह भी पाया कि याचिकाकर्ता ने समझौते के खंड 19.1 के तहत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए समझौते को समाप्त करने का दावा किया, जिसके तहत याचिकाकर्ता को 30 दिन का नोटिस देना अनिवार्य था। विद्वान मध्यस्थ ने पाया कि उक्त नोटिस नहीं दिया गया था और इसलिए, समाप्ति “अशक्त और अशून्य” थी। विद्वान मध्यस्थ के इस निष्कर्ष के आवश्यक परिणाम यह थे, जिसे उन्होंने आक्षेपित निर्णय में दर्ज किया, कि यह समझौता दिनांक 01.04.1999 से दिनांक 31.03.2002 तक अपनी पूरी अवधि तक चलता रहा होगा।

6.3. जहां तक मुद्दा सं. (iii) का संबंध है, विद्वान मध्यस्थ ने तथ्यात्मक निष्कर्ष दर्ज किया कि याचिकाकर्ता की शक्ति और कब्जे में दस्तावेजों को प्रस्तुत करने के लिए उनके द्वारा कई अवसर दिए जाने के बावजूद, उक्त दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किए गए और इसलिए, उन्हें याचिकाकर्ता के खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष दर्ज करना होगा। इस संबंध में चर्चा आक्षेपित अधिनिर्णय के

पैराग्राफ 58 से शुरू होती है और पैराग्राफ 92 पर समाप्त होती है।

6.4. हालांकि मैं यह नोट करना चाहूंगा कि याचिकाकर्ता के आचरण के संबंध में, आक्षेपित अधिनिर्णय में कई अन्य पैराग्राफ हैं, जिनमें विद्वान मध्यस्थ ने प्रासंगिक दस्तावेजों को रोके रखने में याचिकाकर्ता के आचरण पर प्रतिकूल टिप्पणी की है। दस्तावेजों को प्रस्तुत करना आवश्यक था, क्योंकि तथ्य यह था कि प्रत्यर्थी सं. 1 केवल एक एसपीए था (जिसने याचिकाकर्ता के उत्पादों की बिक्री के लिए ऑर्डर प्राप्त किए थे), उत्पादों के प्रेषण, उनकी स्थापना, चालान बनाने और परिणामस्वरूप, धन की प्राप्ति के संबंध में विवरण याचिकाकर्ता के पास उपलब्ध थे। यह तथ्य कि ये दस्तावेज याचिकाकर्ता के पास थे, प्रतिपरीक्षा में उसके स्वयं के गवाह के बयान के दौरान सामने आया। विद्वान मध्यस्थ ने आक्षेपित अधिनिर्णय के पृष्ठ 30 के पैराग्राफ 61 में मामले के इस पहलू पर ध्यान दिया है। प्रासंगिक अंश इस प्रकार है:-

“.....प्रश्न. आपने प्र.प्र./3 कैसे तैयार किया?

उत्तर. इसे हमारे कंप्यूटर रिकॉर्ड के माध्यम से सत्यापित किया गया और फिर तैयार किया गया। हमारे पास सिस्टम में ये सभी ग्राहक खाते हैं, जिनसे हम बिक्री की तारीख, स्थापना की तारीख और भुगतान रसीद की तारीख को मान्य कर सकते हैं। ये नीति के अनुसार बिक्री कमीशन सत्यापन के लिए उपयोग किए जाने वाले प्रमुख पैरामीटर हैं जिनके आधार पर इस रिपोर्ट में दिखाई गई राशि की

गणना की जाती है। ग्राहक खाते से मेरा तात्पर्य उन ग्राहकों के खातों से है जिन्हें कंपनी की मशीनें/उपकरण आपूर्ति किए गए हैं और बेचे गए हैं।

(मेरे द्वारा

जोर दिया गया)

6.5. इस स्तर पर, मैं आक्षेपित अधिनिर्णय के पैराग्राफ 87 से 90 में विद्वान मध्यस्थ के निष्कर्ष को भी नोट करना चाहूंगा, जिसमें याचिकाकर्ता द्वारा जानबूझकर रिकॉर्ड को छुपाने का प्रयास किया गया है, ताकि मध्यस्थ के अनुसार, प्रत्यर्थी सं. 1 के उचित दावों को नकारा जा सके। प्रासंगिक अंश इस प्रकार हैं:-

“...87. दोनों पक्षों को सुनने के बाद तथा तथ्यों, परिस्थितियों और सुस्थापित न्यायिक सिद्धांतों के मद्देनजर मध्यस्थ की राय है कि एसपीए से संबंधित सभी मूल दस्तावेज, जिनमें एसपीए के ऑर्डर, बिक्री और कमीशन से संबंधित दस्तावेज भी शामिल हैं, प्रत्यर्थी कंपनी के पास हैं, जिसने जानबूझकर, नीयत से और दुर्भावनापूर्ण तरीके से मध्यस्थ से उक्त दस्तावेज छुपाए हैं, जबकि मध्यस्थ ने उन्हें बार-बार प्रस्तुत करने का निर्देश दिया था। दावेदार द्वारा दिए गए तर्कों का विशिष्ट महत्व है तथा मध्यस्थ उनसे सहमत है।

88. प्रत्यर्थी के उपरोक्त विस्तृत आचरण से मध्यस्थ के मन में कोई संदेह नहीं रह जाता कि प्रत्यर्थी ने दावेदार को भुगतान करने में देरी करने के उद्देश्य से ही मध्यस्थता कार्यवाही में लुका-छिपी का दृष्टिकोण अपनाया है। वर्तमान

मामला एक उत्कृष्ट मामला है, जहां प्रत्यर्थी , एक बड़ी कंपनी होने के नाते, दावेदार को वैध भुगतान करने से रोकने के लिए अपनी विलम्बकारी ताकत का इस्तेमाल कर रहा है। प्रत्यर्थी को सभी मूल दस्तावेज दाखिल करने से रोकने वाला कुछ भी नहीं था। मध्यस्थ ने प्रत्यर्थी को अपनी शक्ति और कब्जे में सभी मूल दस्तावेज दाखिल करने के लिए कई अवसर दिए। हालांकि, प्रत्यर्थी ने ऐसा न करने का फैसला किया, जिसके कारण वह खुद ही जानता है। इसके अलावा, यदि ऐसे मूल दस्तावेज प्रस्तुत किए जाते, तो यह साबित हो जाता कि प्रत्यर्थी कंपनी दावेदार और मध्यस्थता कार्यवाही के साथ खेल रही है, जिससे कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग हो रहा है और वर्तमान मध्यस्थता का मजाक उड़ाया जा रहा है। प्रत्यर्थी का यह दावा कि मामले से संबंधित रिकॉर्ड बहुत पुराने हैं, इसलिए दस्तावेजों का पता नहीं लगाया जा सकता, स्पष्ट रूप से तर्कसंगत नहीं है। प्रत्यर्थी का झूठ दिनांक 11.9.2010 को दोपहर 1 बजे श्री पी.आर. रंगनाथ (प्र.सा.-1) की प्रतिपरीक्षा से और उजागर हुआ, जिसमें यह संकेत दिया गया कि श्री मनीष गुप्ता द्वारा दिनांक 1.09.2010 को दाखिल किया गया शपथपत्र गलत था तथा बिक्री कमीशन सत्यापन के लिए इस्तेमाल किए गए प्रासंगिक दस्तावेज प्रत्यर्थी कंपनी के पास थे। प्रत्यर्थी का रवैया समय समय पर बदलता रहा, ताकि दावेदार को वैध भुगतान करने में देरी हो सके।

89. रिकॉर्ड से यह पता चलता है कि प्रत्यर्थी एक बड़ी कंपनी है, जो अपने सभी कार्यों के लिए कंप्यूटर और कंप्यूटर संसाधनों का उपयोग करती है। वर्तमान मामले में संबंधित दस्तावेज कंप्यूटर आउटपुट प्रतीत होते हैं, जो कंप्यूटर और कंप्यूटर संसाधनों से उत्पन्न होते हैं। प्रत्यर्थी

कंपनी को इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के साथ-साथ अपने कंप्यूटर, कंप्यूटर सिस्टम, कंप्यूटर नेटवर्क और कंप्यूटर संसाधनों पर मौजूद डेटा और सूचना को इलेक्ट्रॉनिक रूप में दाखिल करने से कोई नहीं रोक रहा था, जिसका वर्तमान कार्यवाही में मुद्दे में शामिल लेनदेन के साथ किसी भी तरह का मेल-जोल, जुड़ाव या संबंध था। हालांकि, ऐसा जानबूझकर नहीं किया गया, जिसके कारण प्रत्यर्थी को ही पता होंगे।

90. यह सुस्थापित कानून है कि चूक होने पर पक्ष के विरुद्ध प्रतिकूल अनुमान लगाया जाएगा कि जो साक्ष्य प्रस्तुत किया जा सकता था, लेकिन प्रस्तुत नहीं किया गया, यदि प्रस्तुत किया जाता, तो वह उस व्यक्ति के लिए प्रतिकूल होता, जिसने उसे रोक रखा है। यह नियम इस प्रसिद्ध कहावत में निहित है: "सभी तथ्य गलत काम करने वाले के विरुद्ध माने जाते हैं"। यदि कोई व्यक्ति गलत तरीके से साक्ष्य को रोक लेता है, तो स्वीकार किए गए या साबित किए गए तथ्यों के अनुरूप उसके लिए नुकसानदेह हर अनुमान को अपनाया जाएगा। इसलिए मध्यस्थ वर्तमान मध्यस्थता कार्यवाही में अपने अधिकार और कब्जे में सभी दस्तावेजों को रोकने और दाखिल न करने के जानबूझकर, इरादतन और दुर्भावनापूर्ण आचरण के लिए प्रत्यर्थी के खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष निकालता है...."

(मेरे द्वारा जोर दिया गया)

7. उपर्युक्त की पृष्ठभूमि में दावा सं. 9, 10, 11, 13 और 17(क) के संबंध में याचिकाकर्ता की आपत्तियों पर विचार करना होगा।

8. मैं यह बताना चाहूंगा कि इस स्तर पर याचिकाकर्ता की ओर से श्री रजत जोनेजा द्वारा दलीलें पेश की गईं, जबकि प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से सुश्री मंजुला गुप्ता द्वारा दलीलें पेश की गईं।

9. मैं उपर्युक्त दावों पर क्रमवार चर्चा करने का प्रस्ताव करता हूँ। ऐसा करने से पहले, मुझे मामले के एक पहलू पर बात करनी चाहिए जिसके बारे में श्री जोनेजा ने जोरदार तर्क दिया था, वह यह था कि विद्वान मध्यस्थ ने किसी भी ज्ञात प्रक्रिया के विपरीत प्रत्यर्थी सं. 1 को अतिरिक्त शपथपत्र के साथ अतिरिक्त दस्तावेज दाखिल करने की अनुमति दी थी। इस उद्देश्य के लिए, मेरा ध्यान दिनांक 21.03.2009 की कार्यवाही पत्र की ओर आकर्षित किया गया। मेरी राय में, आपत्ति निराधार है। विद्वान मध्यस्थ ने दिनांक 21.03.2009 को आयोजित कार्यवाही में याचिकाकर्ता की आपत्ति पर विस्तृत रूप से विचार किया है। इस तथ्य के अलावा कि मध्यस्थ इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि उनके समक्ष कार्यवाही भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 या सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (सि.प्र.सं.) के सख्त प्रक्रियात्मक नियमों से बाधित नहीं थी, उनका मानना था कि दिनांक 13.12.2008 के उनके आदेश के तहत दोनों पक्षों को शेष दस्तावेज दाखिल करने का अवसर देने के बाद, प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा उक्त अवसर का लाभ उठाने और याचिकाकर्ता द्वारा इसके जवाब में कोई दस्तावेज दाखिल करने में विफल रहने में कोई दोष नहीं पाया जा सकता। ऐसा नहीं है कि याचिकाकर्ता को खंडन करने का

अवसर नहीं मिला। यह सिर्फ इतना है कि याचिकाकर्ता के पिछले आचरण के अनुरूप, उसने दस्तावेज दाखिल नहीं करने का निर्णय लिया, ताकि प्रत्यर्थी सं. 1 की मदद से किए गए बिक्री लेनदेन का विवरण उजागर न हो जाए।

दावा सं. 9

10. दावा सं.9 के तहत, प्रत्यर्थी सं. 1 ने विवादित/रोके गए दावों के संबंध में 1,48,800/- रुपए की रिहाई की मांग की थी। दावे में प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा प्राप्त आदेशों के संबंध में 20 अलग-अलग मर्दें शामिल हैं, जिनके विरुद्ध याचिकाकर्ता द्वारा ऐसे आदेशों पर देय कमीशन की गलत कटौती की गई थी। इसके अतिरिक्त, दावे में उपभोग्य सामग्रियों और पुर्जों के संबंध में गलत तरीके से समायोजित की गई धनराशि भी शामिल है, जिन्हें याचिकाकर्ता ने सीधे ग्राहकों को बेचा था। इस खाते में की गई गलत कटौती आठ चालानों का विषयवस्तु थी, जिन्हें याचिकाकर्ता ने जलपाईगुड़ी के जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया था, जिनमें चालान सं. यू2670 से यू2677 तक थे; ये सभी दिनांक 06.06.1995 की तारीख के थे। इन आठ चालानों के विरुद्ध समायोजित कुल राशि 59,797/- रुपये थी। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा याचिकाकर्ता को दावों का विवरण प्रस्तुत किया गया था, जिसकी संचयी कुल राशि 1,48,800/- रुपये थी। याचिकाकर्ता के अधिकारियों ने केवल उन दावों के संबंध में सहायक दस्तावेज मांगे थे, जिनका उल्लेख क्रमांक 1, 5, 7, 8, 9, 12 और 16 के अंतर्गत किया गया था। जिन दावों

के संबंध में दस्तावेज मांगे गए थे, उनकी कुल राशि 49,452 रुपये थी। इस प्रकार, शेष दावों के संबंध में, जिनकी राशि 99,348 रुपये थी, याचिकाकर्ता के अधिकारियों द्वारा उक्त दावों को प्रमाणित करने के लिए कोई दस्तावेज नहीं मांगे गए।

11. याचिकाकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया कि चूंकि 49,452/- रुपए की राशि के दावों के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किए गए थे, इसलिए प्रत्यर्थी सं. 1 के पक्ष में पूरी राशि नहीं दी जा सकती थी। मैं केवल यह नोट करना चाहूंगा कि लिखित प्रस्तुतियों में इस तर्क को सटीक शब्दों में व्यक्त नहीं किया गया है, हालांकि बार में श्री जोनेजा ने ऐसा प्रयास किया था।

12. दूसरी ओर, सुश्री गुप्ता ने दलील दी कि याचिकाकर्ता ने सबसे पहले तो उन दावों के संबंध में भी धनराशि का भुगतान नहीं किया, जिनके लिए कोई दस्तावेज नहीं मांगे गए थे, जबकि याचिकाकर्ता के अनुसार भी स्पष्ट रूप से ये वैध दावे थे।

12.1. जहां तक उन दावों का सवाल है जिनके संबंध में आपत्ति उठाई गई थी, जिनकी संख्या 7 थी, 5 दावे कम भुगतान से संबंधित थे। याचिकाकर्ता के गवाह (प्र.सा.-1) द्वारा कम भुगतान के संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया। इसके अलावा, प्रत्यर्थी सं. 1 ने दस्तावेज उपलब्ध कराए थे, जिनमें मशीन का क्रमांक सं., मॉडल सं. और ऑर्डर कंट्रोल सं. (ओसीएन)

दर्शाया गया था, जो याचिकाकर्ता के लिए दावों की वैधता की जांच करने के लिए पर्याप्त थे।

13. दस्तावेजों के साथ-साथ पक्षों के विद्वान अधिवक्ता की दलीलों की जांच करने के बाद, मेरा मानना है कि उक्त दावे को पूर्ण रूप से स्वीकार करने में विद्वान मध्यस्थ की कोई गलती नहीं पाई जा सकती। यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता द्वारा 1,48,800/- रुपये के कुल दावों में से 99,348/- रुपये के दावों के संबंध में कोई विवाद नहीं उठाया गया था। शेष राशि 49,452/- रुपये के दावे के संबंध में विवाद आधे-अधूरे मन से था, इस अर्थ में कि यद्यपि प्रत्यर्थी सं.1 के पास जो भी जानकारी उपलब्ध थी, उसे उपलब्ध करा दिया था, परंतु किसी अज्ञात कारण से याचिकाकर्ता ने उसकी जांच नहीं करने का निर्णय लिया।

13.1 इसके अलावा, 49,452 रुपये की विवादित राशि का हिस्सा बनने वाली 7 मदों में से 5 मदें कम भुगतान से संबंधित थीं। यह पहलू इस बात का संकेत था कि लेन-देन हुआ था। अगर कोई विवाद था, तो वह राशि के संबंध में था। चूंकि, याचिकाकर्ता के पास आपूर्ति किए गए दस्तावेजों की वैधता की जांच करने का पूरा अधिकार था, इसलिए उसे लेनदेन की पूर्णता पर सवाल उठाने के बजाय भुगतान पर अपनी आपत्ति व्यक्त करनी चाहिए थी। यद्यपि याचिकाकर्ता के अभिवचनों में इस तथ्य का संदर्भ कि दावे समय सीमा पार कर चुके हैं, मेरे समक्ष ऐसा कोई प्रस्तुतीकरण नहीं किया

गया। वास्तव में, यह अभिवचन देने या यह प्रदर्शित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया कि दावों की समय-सीमा समाप्त हो चुकी है। याचिकाकर्ता के बचाव का भार यह था कि सहायक दस्तावेजों का अभाव था, एक ऐसा पहलू जिस पर विद्वान मध्यस्थ ने आक्षेपित अधिनिर्णय में बहुत विस्तार से विचार किया है, जिसमें कहा गया है कि याचिकाकर्ता दस्तावेजों को वापस रखने के लिए जिम्मेदार है और यह प्रतिकूल निष्कर्ष निकालने के लिए उपयुक्त मामला है; जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है। मुझे याचिकाकर्ता द्वारा उठाई गई आपत्ति में कोई गुणावगुण नहीं दिखता। इसलिए इसे खारिज किया जाता है।

दावा सं.10

14. उपर्युक्त दावे के विरुद्ध, प्रत्यर्थी सं. 1 ने याचिकाकर्ता की ओर से जेराँक्स मशीन को बदलने में विफलता के लिए 1,13,206/- रुपये के बराबर की राशि की मांग की, जिसे प्रत्यर्थी सं.1 ने याचिकाकर्ता के कलकत्ता कार्यालय के अनुरोध पर याचिकाकर्ता के ग्राहक को आपूर्ति की थी। विद्वान मध्यस्थ ने इस संबंध में दायर दस्तावेजी साक्ष्य के साथ-साथ दिनांक 02.05.2009 की जिरह में मा.सा.-1 की गवाही पर ध्यान देते हुए निष्कर्ष निकाला है कि प्रत्यर्थी संख्या 1 1,13,206/- रुपए की प्रतिपूर्ति का हकदार है। एक बार फिर, याचिका, लिखित प्रस्तुतियाँ या यहाँ तक कि मौखिक प्रस्तुतियों में भी ऐसा कुछ नहीं कहा गया है, जिससे मैं यह मान सकूँ कि

दावे को गलत तरीके से स्वीकार किया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता ने यह बचाव प्रस्तुत किया है कि डेल्टा ज़ेराक्स नामक एक संस्था को एक मशीन की आपूर्ति की गई थी, जिसे उक्त ग्राहक द्वारा बकाया राशि का भुगतान न करने के कारण दिनांक 31.12.2000 को पुनः अपने कब्जे में ले लिया गया था।

14.1. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं. 1 ने तर्क दिया कि याचिकाकर्ता द्वारा स्थापित मामला कि मशीन को फिर से कब्जे में ले लिया गया था, झूठा था। प्रत्यर्थी सं. 1 के अनुसार, यदि याचिकाकर्ता द्वारा प्रासंगिक दस्तावेज दाखिल किए गए होते तो यह बात सामने आ जाती। प्रत्यर्थी सं. 1 के अनुसार, याचिकाकर्ता की पुरानी मशीन वापसी खरीद योजना के तहत खरीदी गई थी और नई मशीन की कीमत में तदनुसार 30,000/- रुपये की राशि समायोजित की गई थी। चूंकि, नई मशीन प्रत्यर्थी सं.1 द्वारा अपने "स्टॉक और बिक्री खाते" से आपूर्ति की गई थी, याचिकाकर्ता के कलकत्ता कार्यालय के अनुसार, याचिकाकर्ता को या तो मशीन को बदलना था या लागत की प्रतिपूर्ति करनी थी। चूंकि, मशीन को बदला नहीं गया था, इसलिए प्रत्यर्थी सं. 1 ने मशीन के मूल्य के लिए दावा किया, जो कि 1,13,206/- रुपये था।

14.2 मेरे विचार में, याचिकाकर्ता की आपत्ति, यदि है भी, तो साक्ष्य की सराहना से संबंधित है; प्रतिपरीक्षा में मा.सा. -1 की गवाही का खंडन नहीं

किया गया था, और इसलिए, मैं दावा सं. 10 के आधार पर दिए गए निष्कर्ष को पलटने का कोई कारण नहीं देखता।

दावा सं.11

15. इस दावे के संबंध में, विद्वान मध्यस्थ ने प्रत्यर्थी सं. 1 को आपूर्ति की गई दोषपूर्ण मशीनरी के लिए 1,31,438/- रुपए की राशि प्रदान की है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं. 1 ने याचिकाकर्ता के साथ स्टॉक और बिक्री खाता बनाए रखा था, जिसके तहत प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा स्टॉक की गई मशीनें याचिकाकर्ता से खरीदी गई थीं। इस विवरण से ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं.1 ने बीके ऑटो प्राइवेट लिमिटेड को एक मशीन बेची थी। उक्त मशीन खराब होने के कारण याचिकाकर्ता को इसे बदलना पड़ा। चूंकि कोई प्रतिस्थापन नहीं किया गया था, इसलिए प्रत्यर्थी सं.1 ने धन के लिए दावा किया। विद्वान मध्यस्थ का निष्कर्ष यह है कि याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी सं.1 के इस दावे को न तो अपनी अभिवचनों में और न ही खंडन के माध्यम से अपने साक्ष्य में विवादित किया है।

15.1. इन निष्कर्षों को रिकॉर्ड में रखते हुए, कोई भी विद्वान मध्यस्थ के इस दृष्टिकोण से सहमत नहीं हो सकता है कि इस दावे को पूरी तरह से स्वीकार किया जाना चाहिए। श्री जोनेजा यह साबित करने में विफल रहे हैं कि ये निष्कर्ष गलत हैं। केवल यह दावा करना कि कोई सहायक दस्तावेज

दाखिल नहीं किया गया है, पर्याप्त नहीं है, क्योंकि एक बार गवाह की गवाही के आधार पर अभिवचनों में विशिष्ट रुख अपनाया गया था, जिसका याचिकाकर्ता द्वारा खंडन नहीं किया गया है।

दावा सं. 13

16. इस दावे के तहत, प्रत्यर्थी सं. 1 ने ऑस्ट्रिया की यात्रा के संबंध में मौद्रिक मुआवजे की मांग की, जिसे उसके मालिक ने याचिकाकर्ता द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने पर अर्जित किया था। इस दावे के संबंध में भी, ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं. 1 ने अपने गवाह मा.सा.-1 की गवाही द्वारा समर्थित अभिवचनों में दावे किए हैं। स्पष्टतः, याचिकाकर्ता ने इस तथ्य पर विवाद नहीं किया कि उसके द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने पर, प्रत्यर्थी सं. 1 का स्वामी ऑस्ट्रिया की यात्रा करने का पात्र था। प्रत्यर्थी सं. 1 के स्वामी का यह तर्क कि जनवरी, 2001 में कलकत्ता के फोर्ट रेडिसन में आयोजित पूर्वी क्षेत्र डीलर्स सम्मेलन में याचिकाकर्ता के बिक्री प्रबंधक ने उसे आश्वासन दिया था कि ऑस्ट्रिया की यात्रा के बदले उसे 40,000 रुपए का मुआवजा दिया जाएगा, को न तो बचाव के बयान के माध्यम से और न ही खंडन के रूप में प्रस्तुत साक्ष्य के माध्यम से नकारा गया। इन परिस्थितियों में, मध्यस्थ ने प्रत्यर्थी सं. 1 के पक्ष में दावे को स्वीकार कर लिया। यह दावा विद्वान मध्यस्थ के समक्ष प्रस्तुत सामग्री की सराहना पर भी आधारित है। श्री जोनेजा ने मेरे समक्ष कोई साक्ष्य सामग्री

प्रस्तुत नहीं की है, जिससे यह प्रदर्शित हो सके कि याचिकाकर्ता ने वास्तव में उक्त दावे के संबंध में प्रत्यर्थी सं.1 के कथनों को चुनौती दी थी। मेरे विचार में, उक्त दावे के संबंध में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

दावा सं.17 (क)

17. दावा सं. 17(क) वर्ष 2000 की तीसरी और चौथी तिमाही के कमीशन के भुगतान से संबंधित है। इस शीर्ष के अंतर्गत प्रत्यर्थी सं. 1 ने 2,68,084/- रुपये की राशि का दावा किया था। ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा प्रस्तुत समन पत्र (जो उसके गवाह - मा.सा. 1 द्वारा दायर शपथपत्र के साथ संलग्न तालिका 1 का हिस्सा है) में क्रमांक 13 पर सूचीबद्ध मशीन के रूप में मशीन क्रमांक (जिसका मूल्य 2,872/- रुपये था) प्रदान करने की मांग की थी। परिणामस्वरूप, 2,68,084/- रुपये के कुल दावे में से, याचिकाकर्ता को 2,65,212/- रुपये के बराबर राशि के संबंध में कोई समस्या नहीं थी। इसके बावजूद, याचिकाकर्ता ने उन लेन-देन के संबंध में राशि जारी नहीं की, जिनके लिए सत्यापन की आवश्यकता नहीं थी।

17.1. याचिकाकर्ता की ओर से एक बार फिर यह तर्क दिया गया कि कमीशन के दावे के समर्थन में कोई सहायक दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किए गए। विद्वान मध्यस्थ ने याचिकाकर्ता की ओर से आपत्ति को खारिज कर दिया, जबकि इस तथ्य पर गौर किया कि प्रत्यर्थी सं. 1 ने साक्ष्य के अपने

शपथपत्र में मशीन का क्रमांक सं. और ओसीएन प्रदान किया था, यहां तक कि 2,872 रुपये की शेष राशि के संबंध में भी, जिस पर याचिकाकर्ता ने आपत्ति जताई थी। विद्वान मध्यस्थ ने यह तथ्य भी दर्ज किया है कि याचिकाकर्ता के गवाह प्र.सा.-1 ने अपनी प्रतिपरीक्षा में इस तथ्य को स्वीकार किया था कि कमीशन के रूप में देय शेष राशि के संबंध में कोई सत्यापन नहीं मांगा गया था, जिसकी मात्रा 2,65,212 रुपये निर्धारित की गई थी।

17.2. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि इस दावे के संबंध में भी किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

ब्याज, लागत और व्यय

18. यह मुझे अंतिम मुद्दे पर ले आता है, जो सबसे दृढ़ता से लड़े गए दावों में से एक है, जिसे विद्वान मध्यस्थ द्वारा मुद्दा संख्या (v) के तहत आच्छादित किया गया है। यह दावा विद्वान मध्यस्थ द्वारा ब्याज, लागत और व्यय देने से संबंधित है। विद्वान मध्यस्थ ने प्रत्यर्थी सं. 1 के पक्ष में दिए गए सभी दावों पर दिनांक 01.04.2002 से लेकर अधिनिर्णय की तिथि अर्थात् दिनांक 26.11.2012 तक 14% प्रति वर्ष की दर से ब्याज देने का आदेश दिया है। इसके बाद, प्रत्यर्थी सं. 1 के पक्ष में दिए गए सभी दावों पर एक बार फिर भुगतान की तिथि तक 18% प्रति वर्ष की दर से ब्याज देने का आदेश दिया गया।

18.1. लागत और व्यय के लिए दी गई कुल राशि 30,11,300/- रुपये है। हालांकि, इस अधिनिर्णय में गणना संबंधी त्रुटि प्रतीत होती है, क्योंकि लागत और व्यय शीर्षक के अंतर्गत विद्वान मध्यस्थ द्वारा दी गई विभिन्न राशियों की कुल राशि 30,71,300/- रुपये (मध्यस्थ शुल्क में याचिकाकर्ता के हिस्से के रूप में प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा भुगतान की गई 3,07,500/- रुपये की राशि को छोड़कर) होती है, न कि 30,11,300/- रुपये।

18.2 जहां तक ब्याज का संबंध है, विद्वान मध्यस्थ द्वारा प्रदान किया गया तर्क यह है कि पक्षों के बीच हुए समझौते के खंड 7.1 के अनुसार, याचिकाकर्ता को सुरक्षा जमा पर 14% प्रति वर्ष की दर से ब्याज का भुगतान करना आवश्यक था। यह ध्यान देने योग्य है कि मध्यस्थता कार्यवाही के दौरान, याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी सं. 1 को ब्याज सहित 50,000 रुपये की राशि भेजी थी। इन परिस्थितियों में, विद्वान मध्यस्थ का विचार था कि यद्यपि, प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा 18% प्रति वर्ष की दर से ब्याज की मांग की गई थी, तथापि, पूर्व-संदर्भ अवधि और लंबित अवधि के लिए 14% प्रति वर्ष ब्याज की उचित दर होगी। इस तथ्य को देखते हुए कि याचिकाकर्ता ने, विद्वान मध्यस्थ के अनुसार, प्रत्यर्थी सं. 1 को देय राशि जारी करने में जानबूझकर देरी करके उसे परेशान किया था; - उन्होंने अधिनिर्णय की तिथि से भुगतान की वसूली तक की अवधि के लिए 18% प्रति वर्ष की दर से ब्याज देने का आदेश दिया।

18.3. मेरे विचार में, पूर्व और पश्चात अवधि दोनों के लिए विद्वान मध्यस्थ के तर्क में कोई कमी नहीं पाई जा सकती। जबकि पूर्व पक्षकारों के बीच हुए समझौते में दिए गए उपाय पर आधारित है, बाद वाला अधिनियम में ही दिए गए दर पर आधारित है। याचिकाकर्ता के आचरण को देखते हुए, जिसे विद्वान मध्यस्थ द्वारा काफी विस्तार से नोट किया गया है, मैं इस आधार पर अधिनिर्णय पर रोक लगाने का प्रस्ताव नहीं करता हूँ।

19. इसे मेरे समक्ष लागत और व्यय हेतु लाया जाता है।

19.1 जैसा कि विद्वान मध्यस्थ ने उल्लेख किया है, उन्होंने दिनांक 23.07.2011 तक मामले में 84 बैठकें कीं। विद्वान मध्यस्थ ने इन 84 बैठकों के लिए 5,500/- रुपये प्रति बैठक की दर से 4,62,000/- रुपये की राशि के व्यय की अनुमति दी। विद्वान मध्यस्थ द्वारा प्रदान किया गया तर्क यह था कि: “प्रत्यर्थी सं. 1 के विभिन्न दावों को अनुमति दी गई थी”।

19.2. अभिलेख के अवलोकन से पता चलता है कि जब इस न्यायालय द्वारा माध्य. या. सं. 305/2006 में दिनांक 07.02.2007 को आदेश पारित किया गया था, जिसके तहत श्री पवन दुग्गल को मध्यस्थ नियुक्त किया गया था; मध्यस्थ की फीस प्रति बैठक 11,000/- रुपये निर्धारित की गई थी, जो अधिकतम 1,10,000/- रुपये तक हो सकती थी। संभवतः यह समझा गया था कि कार्यवाही 10 बैठकों में समाप्त हो जाएगी। चूंकि, यह गलत

धारणा साबित हुई, इसलिए पक्षों द्वारा एक संयुक्त आवेदन प्रस्तुत किया गया: निपटान की गई याचिका में अंतर.आ.सं. 7446/2008 अर्थात्, माध्य.या.सं. 305/2006, विद्वान मध्यस्थ को देय शुल्क के संबंध में पहले जारी किए गए निर्देश में संशोधन की मांग करने के लिए। इस आवेदन को दिनांक 16.07.2008 के आदेश के तहत स्वीकार किया गया, जब इस न्यायालय ने फैसला सुनाया कि पक्षकार मध्यस्थ के परामर्श से शुल्क तय करेंगे। परिणामस्वरूप, शुल्क की अधिकतम सीमा हटा दी गई।

19.3. इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि 21,79,938/- रुपये मूल्य के कुल दावों में से 12,02,650/- रुपये मूल्य के दावों को अनुमति दी गई, जो कि कुल दावों का लगभग 55% है (ब्याज, लागत और व्यय के दावे को छोड़कर), प्रत्यर्थी सं.1 को इस चरण अर्थात् 23.07.2011 तक मध्यस्थ को भुगतान की गई फीस का 55% प्रतिपूर्ति दी जा सकती है। यह राशि 2,54,100/- रुपये है, जिसका विवरण इस प्रकार है:-

- (i) रु.60,500/- (1,10,000-रु.का 55 प्रतिशत)
- (ii) रु.1,93,600-[रु. 3,52,000 का 55 प्रतिशत-(रु. 4,62,000- घटाव रु. 1,10,000-)]

19.4 मध्यस्थ ने अधिवक्तागण श्री ए.के. गांगुली और सुश्री बरनाली बसाक की लागत और फीस के लिए वास्तविक व्यय क्रमशः 35,000/- रुपये और

25,000/- रुपये निर्धारित किया है, जो कुल मिलाकर 60,000/- रुपये है।

19.5. मेरे अनुसार, ऊपर अपनाए गए सिद्धांत को ही लागू करना होगा, अर्थात् 60,000/- रुपए की राशि का केवल 55% ही देय होगा। इस मद में देय राशि 33,000/- रुपए होगी।

19.6. जहां तक उच्च न्यायालय में कार्यवाही में किए गए व्यय का संबंध है, 1,26,500/- रुपये के कुल दावे के विरुद्ध, विद्वान मध्यस्थ ने 75,000/- रुपये की राशि प्रदान की है, जबकि उन्होंने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि कोई सबूत दाखिल नहीं किया गया है; तथापि, अपने अनुभव के आधार पर कि उच्च न्यायालय में मुकदमेबाजी पर किए गए व्यय से कम से कम ऊपर उल्लिखित लागतें तो आएंगी ही, उन्होंने उक्त राशि प्रदान की है।

19.7 इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उच्च न्यायालय में मुकदमेबाजी की लागत काफी बढ़ गई है, मैं विद्वान मध्यस्थ द्वारा दी गई उक्त राशि को संशोधित करने का प्रस्ताव नहीं करता हूं।

19.8. जहां तक याचिकाओं के प्रारूपण, साक्ष्य के शपथपत्रों, अनुपूरक शपथपत्रों, अतिरिक्त शपथपत्रों और विविध आवेदनों के उत्तर पर हुए व्यय का संबंध है, विद्वान मध्यस्थ ने 1,00,000/- रुपए की धनराशि निर्धारित की है, जिसमें मैं हस्तक्षेप करने का इरादा नहीं रखता, क्योंकि यह उचित प्रतीत होता है।

19.9. अगला शीर्ष, मध्यस्थ के समक्ष उपस्थित होने के लिए सुश्री मंजुला गुप्ता को देय शुल्क है। विद्वान मध्यस्थ ने वास्तविक व्यय के आधार पर 3,55,300/- रुपए की राशि निर्धारित की है। इसी प्रकार, वरिष्ठ अधिवक्ता श्री शंभू प्रसाद सिंह की उपस्थिति के लिए 12,30,000/- रुपए की राशि निर्धारित की गई है। मेरे विचार में, दोनों मदों के अंतर्गत लागत को घटाकर 55% करना होगा, जैसा कि मध्यस्थ की फीस के लिए लागू सिद्धांत था। इसलिए, सुश्री गुप्ता और श्री शंभू प्रसाद सिंह को भुगतान की गई फीस की कुल राशि 15,85,300/- रुपये में से प्रत्यर्थी सं.1 को 8,71,915/- रुपये की राशि वापस की जाएगी।

20. आशुलिपि, टाइपिंग, फोटोकॉपी, डाक और अन्य विविध व्ययों पर हुए व्यय के लिए विद्वान मध्यस्थ ने 21,000/- रुपये की धनराशि प्रदान की है, जिसमें मैं पुनः हस्तक्षेप करने का इरादा नहीं रखता।

20.1. प्रत्यर्थी सं. 1 के मालिक द्वारा दार्जिलिंग से दिल्ली और वापस की विभिन्न यात्राओं पर किए गए व्यय के संबंध में, विद्वान मध्यस्थ ने 6 लाख रुपये की राशि का आदेश दिया है, जिसमें किराया, आवास, भोजन और स्थानीय यात्रा पर किए गए व्यय शामिल हैं। उल्लेखनीय है कि प्रत्यर्थी सं. 1 ने 9,58,847/- रुपए का दावा इस तथ्य के आधार पर किया था कि उसने दिल्ली की 40 यात्राएं कीं और उसे 300 रातों तक दिल्ली में रहना पड़ा। इसके अलावा, यह दावा किया गया था कि 90 रातें पारगमन में बिताई गईं।

मध्यस्थ ने नोट किया कि उक्त लागतों की प्रतिपूर्ति के संबंध में कोई सबूत दाखिल नहीं किया गया, जबकि यह तथ्य स्वीकार किया गया कि प्रत्यर्थी सं. 1 के स्वामी ने लगभग 7 वर्षों तक इस मामले पर मुकदमा चलाया था। इस प्रकार, विद्वान मध्यस्थ ने उपरोक्त परिस्थिति को स्वीकार करते हुए, तथा इस तथ्य को भी ध्यान में रखते हुए कि प्रत्यर्थी सं. 1 के स्वामी को 1000 किलोमीटर से अधिक की दूरी तय करनी पड़ी, व्यय के लिए 6 लाख रुपये की धनराशि प्रदान करना उचित समझा।

20.2. इस दावे में कठिनाई यह है कि प्रत्यर्थी सं. 1 ने कोई दस्तावेज, जैसे हवाई या रेलवे टिकट, आवास, भोजन और स्थानीय यात्रा आदि पर किए गए व्यय के सत्यापन योग्य बिल और चालान, दाखिल नहीं किए हैं। हालांकि, कोई भी यह स्वीकार कर सकता है कि दिल्ली शहर में यात्रा और रहने की लागत सस्ती नहीं है, कथित वास्तविक लागतों की प्रतिपूर्ति केवल कुछ सत्यापन योग्य सबूत के आधार पर ही की जा सकती है।

20.3 ऐसे सत्यापन योग्य सबूत के अभाव में, मध्यस्थ को अपने अनुभव के आधार पर ऐसा उपाय अपनाना होगा जो उचित प्रतीत हो। **दिल्ली नगर निगम बनाम मेसर्स जगन नाथ अशोक कुमार व अन्य (1987) 4 एससीसी 497** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि मध्यस्थ अपने अनुभव पर भरोसा कर सकता है, बशर्ते उसके निष्कर्ष तर्क पर आधारित हों। संबंधित टिप्पणियां नीचे उद्धृत की गई हैं:-

“...5. यह परिचित ज्ञान है, लेकिन इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 1 अपनी कठोरता के कारण मध्यस्थ के समक्ष कार्यवाही पर लागू नहीं होती है। तत्कालीन विद्वान मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति पी.बी. मुखर्जी ने *हाजी इब्राहिम कसम कोचीनवाला बनाम नॉर्दन इंडिया ऑयल इंडस्ट्रीज लिमिटेड* [एआईआर 1951 सीएएल 230: 85 सीएलजे 176] में उपरोक्त विचार व्यक्त किया था और हमारा विचार है कि यह इस पहलू पर कानून का सही कथन प्रस्तुत करता है। लॉर्ड गोडार्ड, मु.न्या. ने *मेडिटेरेनियन एंड ईस्टर्न एक्सपोर्ट कंपनी लिमिटेड बनाम फोर्ट्रेस फैब्रिक्स लिमिटेड* [(1948) 2 ऑल ईआर 186, 188, 189] मामले में रिपोर्ट के पृष्ठ 188-89 पर निम्नलिखित टिप्पणी की:

“व्यापार में एक व्यक्ति जो अपने अनुभव के लिए चुना जाता है, वह संभवतः बाजार के उतार-चढ़ाव को जानता होगा, और वास्तव में, उससे यह अपेक्षा भी की जाएगी कि वह उन्हें जाने और किसी भी बिंदु पर स्वयं को सूचित करने या अपनी स्मृति को ताजा करने के लिए पर्याप्त साधन उपलब्ध कराएगा, जिस पर उसे ऐसा करना आवश्यक लगे। इस मामले में, विक्रेताओं के शपथपत्र के अनुसार, उन्होंने मध्यस्थ के समक्ष यह मुद्दा उठाया कि दक्षिणी अफ्रीकी बाजार में "मंदी" आई है। क्रेताओं ने उस कथन का विरोध किया या नहीं, यह तो स्पष्ट नहीं है, लेकिन एक अनुभवी मध्यस्थ को पता होगा, या उसके पास जानने के साधन होंगे, कि ऐसा था या नहीं, और किस हद तक, और मैं कोई कारण नहीं देखता कि सिद्धांततः उसे किसी विशेष व्यापार से संबंधित किसी अन्य प्रश्न की तुलना में इस बिंदु पर अधिक साक्ष्य की आवश्यकता क्यों होनी चाहिए। मुझे लगता है कि यह माना जाना चाहिए कि जो राशि उसके पास है, उसे तय करने में उसने अपने ज्ञान और अनुभव के आधार पर काम किया है। वह

दिन बहुत पहले बीत चुका है जब न्यायालय मध्यस्थों के क्षेत्राधिकार को ईर्ष्या से देखती थीं। मेरी राय में, आधुनिक प्रवृत्ति, विशेष रूप से वाणिज्यिक मध्यस्थता में, उन कुशल व्यक्तियों के निर्णयों को कायम रखने का प्रयास करने की है, जिन्हें पक्षों ने स्वयं अपने बीच के विवाद के प्रश्नों पर निर्णय करने के लिए चुना है। यदि मध्यस्थ ने अपने प्रस्तुतीकरण की शर्तों के अंतर्गत काम किया है और उसने प्राकृतिक न्याय कहे जाने वाले किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं किया है, तो न्यायालयों को उसके अधिनिर्णय को खारिज करने में वास्तव में धीमी गति से काम करना चाहिए।

6. हमारी राय में यह उचित दृष्टिकोण है।

.....8. आखिरकार, बेंजामिन एन कार्डोजो के शब्दों में, न्यायाधीश के रूप में मध्यस्थ को परंपरा द्वारा सूचित, सादृश्य द्वारा विधिबद्ध, प्रणाली द्वारा अनुशासित और "सामाजिक जीवन में व्यवस्था की मौलिक आवश्यकता" के अधीन विवेक का प्रयोग करना होता है..."

(मेरे द्वारा जोर दिया गया)

20.4. इस संदर्भ में, मैं विद्वान मध्यस्थ द्वारा दी गई राशि की वैधता की जांच करना चाहता हूं, ताकि याचिकाकर्ता की ओर से श्री जोनेजा द्वारा इस दावे का विरोध किए जाने के मद्देनजर इस न्यायालय की अंतरात्मा को संतुष्ट किया जा सके।

20.5. मेरे समक्ष याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने इस तथ्य पर विवाद नहीं किया कि प्रत्यर्थी सं.1 के मालिक ने दिल्ली की 40 यात्राएँ की थीं। यह

तर्क दिया जा सकता है कि इस संबंध में प्रत्यर्थी सं.1 को सबूत पेश करने होंगे। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि विद्वान मध्यस्थ द्वारा दिनांक 23.07.2011 तक 84 बैठकें आयोजित की गईं, यह स्वीकार करना अनुचित नहीं हो सकता है कि प्रत्यर्थी सं.1 के मालिक ने दिनांक 04.06.2007 अर्थात् जब मध्यस्थ ने संदर्भ दर्ज किया और दिनांक 23.07.2011 के बीच कम से कम 40 अवसरों पर दिल्ली का दौरा किया था। यदि विद्वान मध्यस्थ द्वारा दी गई राशि का आनुपातिक हिसाब लगाया जाए, जो इस मद के अंतर्गत 6 लाख रुपये है, तो प्रत्यर्थी सं. 1 के स्वामी ने प्रत्येक यात्रा पर लगभग 15,000 रुपये खर्च किए होंगे। इस राशि में आने-जाने का किराया, आवास, भोजन और स्थानीय यात्रा पर हुए खर्च शामिल होंगे। यह देखते हुए कि दार्जिलिंग और दिल्ली के बीच की दूरी लगभग 1400 किलोमीटर है, 2007-2012 के दौरान आने-जाने का औसत रेल किराया 4,000 रुपये से कम नहीं होगा। इसलिए, किराए पर ही, प्रत्यर्थी सं. 1 ने, पुराने अनुमान के अनुसार, कम से कम 1,60,000 रुपये (यानी, 4,000 रुपये x 40 यात्राएं) खर्च किए होंगे।

20.6. हालांकि, प्रत्यर्थी सं. 1 के मालिक की ओर से यह दावा किया गया है कि उसने शहर में 300 रातें बिताईं, इसके अलावा 90 रातें पारगमन में बिताईं, लेकिन इस संबंध में कोई सबूत नहीं है। अगर कोई आवास, भोजन और स्थानीय यात्रा के लिए पुराने दर को ध्यान में रखता है, तो एक व्यक्ति

कम से कम 1,500 रुपये प्रतिदिन खर्च करेगा। यदि प्रत्यर्थी सं. 1 के मालिक द्वारा पारगमन में बिताई गई 90 रातों को छोड़ दिया जाए, तो भी प्रत्यर्थी सं. 1 के मालिक ने 4,50,000/- रुपये की राशि खर्च की होगी।

20.7. किराया और आवास व्यय की कुल राशि लगभग 6,10,000/- रुपये होगी। इसलिए, मेरे विचार में, मध्यस्थ ने अपने अनुभव का सहारा लेते हुए 6 लाख रुपये की राशि देने में ऐसी राशि नहीं दी है जिसे अत्यधिक कहा जा सके।

20.8. स्पष्टतः, विद्वान मध्यस्थ ने कुछ अतिरिक्त लागतें निर्धारित कीं, जो जाहिर तौर पर प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा दिनांक 04.08.2011 के बाद खर्च की गई थीं। इस संबंध में शपथपत्र दिनांक 11.09.2012 को दाखिल किया गया था। निर्णय के अवलोकन से पता चलता है कि विद्वान मध्यस्थ द्वारा दिनांक 03.09.2012 को मसौदा निर्णय तैयार किया गया था। चूंकि याचिकाकर्ता ने फीस के अपने हिस्से के संबंध में बकाया राशि का भुगतान नहीं किया था, इसलिए मामले को 6 मौकों पर सुनवाई के लिए निर्धारित किया गया था, अर्थात् 11.09.2012, 17.09.2012, 22.09.2012, 15.10.2012, 29.10.2012 और अंततः 26.11.2012 को।

20.9. इस प्रकार प्रत्यर्थी सं. 1 ने विद्वान मध्यस्थ द्वारा दी गई सुनवाई की तिथियों का उपयोग अतिरिक्त शपथपत्र दायर करने के लिए किया, जैसा

कि ऊपर संकेत दिया गया है, अधिवक्तागण की फीस और उसके मालिक द्वारा की गई यात्राओं के संबंध में किए गए खर्चों की प्रतिपूर्ति का दावा करने के लिए। वरिष्ठ अधिवक्ता और प्रशिक्षित अधिवक्ता की फीस के लिए दी गई राशि कुल 1,08,000 रुपये थी, जबकि प्रत्यर्थी सं.1 के मालिक द्वारा अगस्त, 2011 के बाद की अवधि में की गई यात्राओं पर किए गए व्यय के लिए दी गई राशि 60,000 रुपये थी। सटीक रूप से कहें तो, यह राशि निम्नलिखित अवधियों के दौरान की गई यात्राओं के लिए दावा की गई थी: दिनांक 13.10.2011 से दिनांक 24.10.2011; दिनांक 18.04.2012 से दिनांक 02.05.2012; दिनांक 11.07.2012 से दिनांक 16.07.2012; और 01.09.2012 से 11.09.2012। इस प्रकार, कुल 1,68,000/- रुपए की राशि प्रदान की गई।

21. मेरे विचार में, जहां तक वरिष्ठ अधिवक्ता और अनुदेशक अधिवक्ता की फीस का प्रश्न है, 1,08,000/- रुपये की राशि के विरुद्ध, प्रत्यर्थी सं. 1 को केवल 59,400/- रुपये (कुल फीस का 55%) की प्रतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार होना चाहिए। प्रत्यर्थी सं. 1 के स्वामी द्वारा दिल्ली की यात्राओं पर किए गए व्यय के संबंध में, मैं 60,000/- रुपए की राशि प्रदान करूंगा, जो कि विद्वान मध्यस्थ द्वारा प्रदान की गई राशि भी है, क्योंकि निम्नलिखित गणनाओं के आधार पर कुल राशि 76,000/- रुपए होती है।

(i) 4 यात्राओं के लिए 4,000/- रुपये की दर से, आने-जाने के किराए के रूप में 16,000/- रुपये की राशि।

(ii) 40 दिनों की अवधि के लिए 1,500/- रुपये की दर से आवास, भोजन और स्थानीय यात्रा के लिए 60,000/- रुपये की राशि।

22. उपरोक्त के अतिरिक्त, अधिनिर्णय सुरक्षित करने के लिए, प्रत्यर्थी सं.1 ने याचिकाकर्ता की लागत के हिस्से के रूप में 3,07,500/- रुपये की राशि का भुगतान किया, जिसका भुगतान प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा किया गया। यह राशि प्रत्यर्थी सं. 1 को पूरी तरह से प्रदान की जानी चाहिए।

23. इसलिए, मैं प्रत्यर्थी सं.1 को लागत और व्यय के रूप में कुल 23,81,915 रुपये प्रदान करूंगा, जिसका ब्यौरा इस प्रकार है:-

क्र.सं.	विवरण	मध्यस्थ द्वारा प्रदान की गई राशि (रु.)	उपरोक्त निर्देशों के अनुसार संशोधित राशि (रु.)
1.	प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा वहन की गई मध्यस्थ की फीस का हिस्सा	4,62,000/-	2,54,100/-

2.	अधिवक्तागण श्री ए.के. गांगुली और सुश्री बरनाली बसाक, की लागत और फीस पर किया गया व्यय	60,000/-	33,000/-
3.	उच्च न्यायालय में कार्यवाही में हुए व्यय	75,000/-	75,000/-
4.	याचिकाओं, शपथपत्रों, आवेदनों आदि का मसौदा तैयार करने पर होने वाला व्यय	1,00,000/-	1,00,000/-
	आदि		
5.	मध्यस्थ के समक्ष उपस्थित होने के लिए सुश्री मंजुला गुप्ता, अधिवक्ता और श्री शंभू प्रसाद सिंह, वरिष्ठ अधिवक्ता को भुगतान की गई फीस	15,85,300 /-	8,71,915/-
6.	आशुलिपि, टाइपिंग, फोटोकॉपी, डाक आदि पर होने वाला व्यय	21,000/-	21,000/-

7.	प्रत्यर्थी सं. 1 के मालिक द्वारा दार्जिलिंग से दिल्ली और वापस की यात्रा पर किया गया व्यय	6,00,000/-	6,00,000/-
8.	04.08.2011 के बाद वरिष्ठ अधिवक्ता और अनुदेशक अधिवक्ता की फीस के भुगतान के कारण हुए अतिरिक्त व्यय	1,08,000/-	59,400/-
9.	प्रत्यर्थी सं. 1 के मालिक द्वारा दिनांक 04.08.2011 के बाद दिनांक 13.10.2011 से दिनांक 11.9.2012 के बीच की अवधि के लिए दिल्ली की यात्राओं के कारण किए गए अतिरिक्त व्यय	60,000/-	60,000/-
	उप-योग: 30,71,300/- रुपये (नोट: अधिनिर्णय में कुल राशि गलती से 30,11,300/- रुपये दर्शाई गई है)		

10.	मध्यस्थ को भुगतान की गई फीस में याचिकाकर्ता के हिस्से के रूप में प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा भुगतान की गई राशि की वापसी	3,07,500/-	3,07,500/-
	कुलयोग:	33,78,800 /-	23,81,915/-

23.1. परिणामस्वरूप, विद्वान मध्यस्थ द्वारा दी गई कुल राशि 33,78,800/- रुपये में से, ऊपर जारी निर्देशों के मद्देनजर, इस शीर्ष के अंतर्गत कुल राशि संशोधित कर 23,81,915/- रुपये कर दी जाएगी।

24. उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, याचिकाकर्ता द्वारा दावा सं. 9, 10, 11, 13 और 17(क) के संबंध में दी गई चुनौती को खारिज किया जाता है। विद्वान मध्यस्थ द्वारा पूर्व-संदर्भ अवधि, वादकालीन अवधि तथा निर्णय की तिथि के पश्चात् उसके भुगतान के कायम रहने तक दी गई ब्याज दर। अधिनिर्णय को केवल लागत और व्यय के आधार पर ऊपर दर्शाई गई सीमा तक संशोधित किया जाता है।

25. याचिका का निपटान उपरोक्त शर्तों के साथ इस निर्देश के साथ किया जाता है कि जहां तक वर्तमान कार्यवाही का संबंध है, पक्षकारों को अपने खर्च स्वयं वहन करेंगे।

न्या. राजीव शकधर,

जनवरी 13, 2014

वाईजी

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।